International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 2; March 2018; Page No. 878-879

जनवादी कवि कबीर

किरण मयी
Research Scholar, MDU, Rohtak, Haryana, India

सारांश
कबीर हिंदी के पहले प्रमुख कवि है जिनमें गहरी प्रश्नाकुलता दिखाई पड़ती है। यथास्थिति से विद्रोह करने वाला उनके जैसा बड़ा व्यक्तित्व मध्य युग में नहीं हुआ। कबीर में समता और स्वतंत्रता के आधुनिक मूल्यों का जैसा परिपाक मिलता है, वैसा किसी और लेखक में नहीं। कबीर जनवादी कवि थे तथा उन्होनें अपनी वाणी से जन – जन की समस्याओं का वर्णन किया है।
कबीर भारतीय समाज के जिस युग में पैदा हुए थे, वह मुस्लिम काल के नाम से जाना जाता है। कबीर के समय तक उत्तर की आबादी का एक अच्छा खासा भाग मुसलमान हो चुका था। स्वयं कबीर जिस जुलाहा जाति में पैदा हुए थे, वह एक दो पीढ़ी पहले मुसलमान हो चुकी थे। लेकिन कबीर अपने को हिंदु या मुसलमान नहीं मानते है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार भी कबीर का जीवन दर्शन उनके जन्म और जातिगत वातावरण से बड़ी हद तक प्रभावित हुआ था। उनकी सामाजिक चेतना बहुत तीव्र थी। जनता के दुख दर्द और उसकी वेदना से फुटकर ही उनके काव्य की सरस्वती बही थी। जनता की पीड़ा से उनका काव्य ओत प्रोत है।

मूल शब्दः सामाजिक चेतना, भारतीय समाज, जनवादी कवि कबीर

प्रस्तावना

जनवादी कवि कबीर

कबीर निर्गुण वादी थे, किंतु उनके विचार दर्शन का आधार भक्ति और प्रेम था। वेदांत और सूफी मत, दोनों से वह प्रभावित हुए थे। कबीर ने बार बार कहा है कि प्रेम का महत्त्व सब पेाथी पत्री से बड़ा है। कबीर कहते है :–

पढ़ि पढ़ि के पत्थर भया, लिखी–लिखी भया जु ईंट।
कहै कबीरा प्रेम की, लगी न एकौ छींट।।

कबीर सभी बाह्य आडंबर और पाखंड के विरूद्ध थे। इसलिए वह राम और रहीम, मुल्ला और पांडे का भेद नहीं मानते थे। कबीर कहते है :–

मुड़ मुड़ाएँ हरि मिले, सब कोई लेइ मुड़ाय।
बार–बार के मुड़े ते, भेड़ ने बैकुंठ जाए।।
पूजा, सेवा नेम, व्रत गुड़ियन का सा खेल।
जब लग पिऊ परसे नहीं तब लग संसय मेल।।

कबीर प्रेम को जीवन का मूल मंत्र मानते है। उनके अनुसार सच्चा धर्म वही है जो मनुष्य को प्रेम की सीख देता है। कबीर प्रेम की महिमा गाते नहीं थकते :–

यह तो घर है प्रेम का, खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे, भुइं धरे, तब पैठे घर माहिं।।

इसी सर्वव्यापी प्रेम के कारण ऊँच नीच और हिंदू मुसलमान के भेदभाव को कोई प्रक्षय नहीं देते। मनुष्य मात्र का महत्त्व उनकी दृष्टि में बड़ा है, उसकी बाह्य वेशभूषा, आचार विचार जो भी हो, मध्ययुग के गहन कुहासे से कबीर के ये विचार आलोक की तीव्र और तीखी स्वर्णिम रेखाएँ है, जिनसे आज भी अंधविश्वासों में डूबा प्राणी प्रकाश पा सकता है।
कबीर मनुष्य के दुख से द्रवित होकर बड़ी हृदय दृावक में जग की पीड़ा का वर्णन करते है :–

चलती चक्की देखि कै, दिया कबीरा रोय।
दुइ पट भीतर आइ कै, साबित गया न कोय।।

इसी सर्वव्यापी पीड़ा के कारण कबीर संसार को असार समझने लगे थे। इसके पाखंड और मिथ्याचारों से उन्हे घृणा हो गई थी। सभी धर्मो में वह मंहती और झूठ का आडंबर देखते थे। कबीर ने निरंतर अपने पदों में सत्य, सहृदयता और सत्संग की प्रशंसा की। उनकी सीख उत्तर भारत की जिह्वा पर पूर्ण रूप से चढ़ गई है। कबीर ने जाति पाति का विरोध करते हुए कहा है किः–

जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान।
मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान।।
संत न छांडै संतई, कोटिक मिलै असंत।
मलय, भुंवगहि वेधिया, शीतलता न तजंत।।

जीवन पर्यन्त अपनी अटपटी सधुक्कड़ी भाषा में कबीर उत्तर भारत की जनता को सीख देते रहे। सुकरात के समान वह कड़वी बाते कहते थे। उनके विद्रोही स्वर का तत्कालीन शासन व्यवस्था और सामाजिक व्यवस्था पर तीव्र आघात करता था। झूठा रोजा, झूठी ईद जैसे वाक्यों से क्रुद्ध होकर बादशाह सिंकदर लोदी ने कबीर को जंजीरों में बंधवा कर गंगा में फिंकवा दिया, किंतु कबीर किसी प्रकार बच गए। वह कहते है :–

गंग लहर मेरी टुटी जंजीर, मृगछाला पर बैठे कबीर।
कहे कबीर कोई संग न साथ, जल थल राखत है रघुनाथ।।

कबीर ने अपनी भाषा को भी कभी सजाया और संवारा नहीं। सीधी,

साफ, दोटूक बात कहते थे। कवि बनना या कहलाना उनका ध्येय न था। वह कवि बिना इच्छा किए ही बन गए। क्योकि ज्ञान का अनमोल मोती उन्हे मिला था। इसका मूल्य जनता ने पहचाना। कबीर सामान्य जीवन से अपनी उपमाएं लेते है। और इसी कारण उपमाओं में बल है, तीखापन है ह्रदय को बेधने की क्षमता है। व्यापारी, तराज, माटी जौहरी, गंधी विरहिन पति, बहू, खाला का घर, आदि उपमाएँ और शब्द चित्र कबीर, वाणी में प्रचुरता से मिलते है। इसमें पंडितों के अनुसार अक्सर ग्रामीण दोष भी कहा जाएगा, किंतु भारतीय समाज ने कबीर की वाणी को अपना कर यह सिद्ध कर दिया कि यह वाणी वस्तुत भारतीय समाज के ह्रदय की वाणी है।कबीर ने अपने समय को भारतीय समाज में धर्मो जातिया और सम्प्रदायों के बीच फैले ऊँच नीच के भेदभाव और उससे उपजे द्वेष और घृणा के भीषण सच को देखा था, घर में रह कर या वन में जा कर नहीं, बाजार में खड़े हो कर उस सच का साक्षात्कार किया था और उसकी भयावह संभावनाओं का भी। इसलिये वे दुखी भी थे:

सुखिया सारा जहान है, खावै अरू सौवें।
दुखिया दास कबीर है, जागै अरू रोवै।।

कबीर की कविता को जनता केवल पढ़ती और सुनती ही नहीं, उसी जीती भी है। उनकी कविता की एक विशेषता यह है कि वह साधारण जनता को भी कवि बनाती है। इसीलिये कबीर के नाम से असंख्य ऐसे पद और साखियाँ जन जीवन में मिलती है जो कबीर की नहीं जनता की रची हुए है। कबीर की रचना की अपार लोकप्रियता का कारण उसी बोलचाल और जीवन व्यवहार की भाषा है। उसकी बनावट ऐसी है कि वह हिंदु और मुसलमान साधु और ग्रहस्थ और देहाती पढ़े लिखे और अनपढ़ स्त्री और पुरूष सबको अपनी भाषा लगती है। वह जितनी सहज है उतनी ही अर्थपूर्ण है।

निष्कर्ष

महात्मा कबीर के काव्य का अनुशीलन यह सिद्ध करता है उनके काव्य की मूलभूत चेतना समाज संग्रह है वैयक्तिक मुक्ति का विधान नहीं। कबीर की भक्ति समाजोन्मुखी है, नर में नारायण की खोज करती है। कबीर, मानव मात्र की समता, एकता एवं स्वतंत्रता का उद्घोष करती है और एक आदर्श आध्यात्मिक मानव निर्माण के माध्यम से समतामूलक, शोषण रहित, हिंसा रहित एवं समरस समाज का स्वप्न देखते है।

आज की सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों को देखकर भले ही हमें यह लगता है कि हम उत्तर कबीर युग में जी रहे है लेकिन अगर हम कबीर की ध्यान से पढ़े तो यह स्पष्ट होगा कि उसमें आज के हमारे समय और समाज के अनेक जटिल सामाजिक सांस्कृतिक प्रश्नों की पहचान के संकेत है और उनके उत्तर की संभवानाएँ थे।

संदर्भ

1. कबीर एक पुनर्मूल्यांकन – डॉ बलदेव वंशी
2. कबीर की खोज – राज किशोर
3. निर्गुण संतो के स्वप्न – डेविड एन लॉरेंजन
4. भक्ति काव्य और वर्तमान समय – स. रतन कुमार पाण्डेय
5. इंटरनेट